

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

डॉ. नवीन जी एच

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

2023 की दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला सं. 102

8 मई, 2023

(माननीय न्यायमूर्ति श्री अनिल कुमार सिन्हा)

विचार के लिए मुद्दा

क्या नालंदा विश्वविद्यालय के कुलसचिव द्वारा जारी कार्यालय आदेश, जिसमें परिवीक्षाधीन याचिकाकर्ता की अनुबंध अवधि को नहीं बढ़ाने के संबंध में आदेश दिया गया था, तथा याचिकाकर्ता को बकाया राशि का भुगतान करने और 'अदेयता प्रमाण पत्र' प्रस्तुत करने के लिए एक महीने का नोटिस दिया गया था, सही है या नहीं?

हेडनोट्स

विश्वविद्यालय विधि- याचिकाकर्ता को तीन साल की अवधि के लिए अनुबंध के आधार पर वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक के पद पर नियुक्त किया गया था - अनुबंध की पूरी अवधि परिवीक्षा पर है और यह वितरण, जवाबदेही, आचरण और व्यवहार, छात्रवृत्ति और अखंडता की प्रभावशीलता पर आधारित है - परिवीक्षा की अवधि को आगे बढ़ाया जा सकता है - विश्वविद्यालय के निर्णय के अनुसार प्रदर्शन और आचरण की समीक्षा की जाएगी - याचिकाकर्ता को अपने प्रदर्शन में सुधार करने का कोई अवसर नहीं दिया गया था और उसे पहले से नहीं बताया गया था कि उसका काम और प्रदर्शन मानक के अनुरूप नहीं है।

निर्णय: याचिकाकर्ता के प्रदर्शन की समीक्षा करने पर, याचिकाकर्ता को अपने शैक्षणिक प्रदर्शन में सुधार करने का अवसर दिया गया था, लेकिन विषय के मूलभूत और सैद्धांतिक भाग के ज्ञान की कमी के कारण याचिकाकर्ता अपने शिक्षण दायित्वों को पूरा करने में

विफल रहा - विश्वविद्यालय ने, अनुबंध के संदर्भ में, याचिकाकर्ता की परिवीक्षा अवधि का विस्तार नहीं करने का निर्णय लिया - यह विधि का अच्छी तरह से स्थापित सिद्धांत है कि यदि परिवीक्षा अवधि के दौरान परिवीक्षाधीन को बर्खास्त/समाप्त कर दिया जाता है, तो कोई अवसर दिए जाने की आवश्यकता नहीं है और इसलिए, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन का सवाल ही नहीं उठता है - विवादित आदेश कलंकपूर्ण और दंडात्मक नहीं है, नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत, कठोर अर्थों में (स्ट्रिक्टो सेन्सो), लागू नहीं होता है - रिकॉर्ड पर मौजूद दस्तावेजों से, यह उभर कर आता है कि याचिकाकर्ता को विभिन्न अवसरों पर डीन द्वारा अपने प्रदर्शन में सुधार करने के लिए पर्याप्त अवसर दिया गया था, जिसमें कुलपति और विश्वविद्यालय के अन्य अधिकारियों द्वारा उनके और याचिकाकर्ता के बीच आयोजित कई बैठकों में परामर्श भी शामिल था - विवादित आदेश कदाचार के आरोप पर आधारित नहीं है और दंडात्मक नहीं है - रिट याचिका खारिज।

(कंडिका 1, 2, 34, 36, 37, 38, 40 और 42)

न्याय दृष्टान्त

ओम प्रकाश मान बनाम शिक्षा निदेशक (बेसिक) एवं अन्य, (2006) 7 एससीसी 558; भारतीय स्टेट बैंक एवं अन्य बनाम पलक मोदी एवं अन्य, (2013) 3 एससीसी 607; समशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य, (1974) 2 एससीसी 83; पुरुषोत्तम लाल दींगरा बनाम भारत संघ, एआईआर 1958 एससी 36: 1958 एससीआर 828: 1958 एससीजे 217—पर भरोसा किया गया।

चंपकलाल चिमनलाल शाह बनाम भारत संघ, एआईआर 1964 एससी 1854: (1964) 5 एससीआर 190: (1964) 1 एलएलजे 752; तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग बनाम डॉ. एम.डी.एस. इस्केन्दर अली, (1980) 3 एससीसी 428: 1980 एससीसी (एल एंड एस) 446—संदर्भित किया गया।

सुमति पी. शेर बनाम भारत संघ एवं अन्य, (1989) 3 एससीसी 311—विशिष्ट किया गया।

अधिनियमों की सूची

विश्वविद्यालय विधि; नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियम, 2010; नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियमावली, 2012; नालंदा (संशोधन) अधिनियमावली, 2021

मुख्य शब्दों की सूची

अनुबंध अवधि का विस्तार, विश्वविद्यालय विधि, सहायक प्राध्यापक, समाप्ति, नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत, स्ट्रिक्टो सेन्सो, जवाबदेही, छात्रवृत्ति।

प्रकरण से उत्पन्न

नालंदा विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार द्वारा ज्ञापन संख्या एनयू/एसीएडी/2021-22 के तहत जारी कार्यालय आदेश, दिनांक 06.12.2022 से, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को सूचित किया गया है कि उसके प्रदर्शन की उचित समीक्षा के बाद, परीवीक्षाधीन याचिकाकर्ता की अनुबंध अवधि के आगे विस्तार पर विचार नहीं किया गया है और याचिकाकर्ता को बकाया राशि का भुगतान करने और 'अदेयता प्रमाण पत्र' जमा करने के लिए एक महीने का नोटिस दिया गया था।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

याचिकाकर्ता के लिए: श्री अभिनव श्रीवास्तव, अधिवक्ता; श्री रुद्राक्ष शिवम सिंह, अधिवक्ता; श्री अर्पित आनंद, अधिवक्ता; श्री रौशन, अधिवक्ता; श्री पुष्कर भारद्वाज, अधिवक्ता।

भारत संघ के लिए: श्री अंशुमान सिंह।

विश्वविद्यालय के लिए: श्री अंजनी कुमार, वरिष्ठ अधिवक्ता; श्री अमित झा.

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: आभाष चंद्र

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2023 की दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला सं.102

=====

डॉ. नवीन जी. एच. पिता- हलप्पा जी. आर., आई. डी. के. 108/ए, गणेश कॉलोनी, निवासी
डाकघर- भद्रावती, थाना- शिमोगा, राज्य-कर्नाटक, पिन कोड- 577301

... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. सचिव, विदेश मंत्रालय, नई दिल्ली के माध्यम से भारत संघ।
2. अपने कुलसचिव के माध्यम से नालंदा विश्वविद्यालय, राजगीर, जिला-नालंदा।
3. कुलपति, नालंदा विश्वविद्यालय, राजगीर, जिला-नालंदा।
4. कुलसचिव, नालंदा विश्वविद्यालय, राजगीर, जिला-नालंदा।

... उत्तरदाता/ओं

=====

उपस्थिति:

याचिकाकर्ताओं के लिए	:	श्री अभिनव श्रीवास्तव
		श्री रुद्राक्ष शिवम सिंह
		श्री अर्पित आनंद
		श्री रौशन
		श्री पुष्कर भारद्वाज
भारत संघ के लिए	:	श्री अंशुमन सिंह
नालंदा विश्वविद्यालय के लिए	:	श्री अंजनी कुमार, वरिष्ठ अधिवक्ता।
		श्री अमित झा

=====

कोरम: माननीय न्यायमूर्ति श्री अनिल कुमार सिन्हा

निर्णय और आदेश

सी. ए. वी.

दिनांक : 08-05-2023

याचिकाकर्ता, जिसे नालंदा विश्वविद्यालय के अंतर्गत नालंदा में स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्थ/स्कूल ऑफ बौद्ध स्टडीज, फिलॉसफी एंड कम्पेरेटिव स्टडीज में वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक के पद पर नियुक्त किया गया था (जिसे आगे 'स्कूल' कहा जाएगा), तीन साल की अवधि के लिए अनुबंध के आधार पर, ने कुलसचिव, नालंदा विश्वविद्यालय द्वारा मेमो संख्या एनयू/एसीएडी/2021-22 के तहत जारी कार्यालय आदेश, दिनांक 06.12.2022 को रद्द करने के लिए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को सूचित किया गया है कि उसके प्रदर्शन की उचित समीक्षा के बाद, परीवीक्षा के तहत याचिकाकर्ता की अनुबंध अवधि के आगे विस्तार पर विचार नहीं किया गया है और याचिकाकर्ता को बकाया राशि का भुगतान करने और 'अदेयता प्रमाण पत्र' जमा करने के लिए एक महीने का नोटिस दिया गया था।

2. याचिकाकर्ता और नालंदा विश्वविद्यालय (इसमें बाद में 'विश्वविद्यालय' के रूप में उल्लिखित) के बीच अनुबंध समझौते की शर्तों के अनुसार, अनुबंध की संपूर्ण अवधि परीवीक्षा पर रहेगी और यह सेवा प्रदाय की प्रभावशीलता, उत्तरदायित्व, आचरण एवं व्यवहार, विद्वत्ता तथा ईमानदारी पर आधारित होगी। परीवीक्षा की अवधि को और बढ़ाया जा सकता है। विश्वविद्यालय के निर्णय के अनुसार प्रदर्शन और आचरण की समीक्षा की जाएगी।

3. प्रकरण की वास्तविक स्थिति यह है कि नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियम, 2010 के अंतर्गत विश्वविद्यालय को एक अंतर्राष्ट्रीय संस्थान के रूप में स्थापित किया गया है, जिसका उद्देश्य बौद्धिक, दार्शनिक, ऐतिहासिक एवं आध्यात्मिक अध्ययन करना है। उक्त नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियम, 2010 को लागू किया गया था ताकि 15.01.2007 को

फिलीपींस में आयोजित द्वितीय पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन तथा तत्पश्चात् 25.10.2009 को थाईलैंड में आयोजित चतुर्थ पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन में लिए गए निर्णय को कार्यान्वित किया जा सके।

4. नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियम, 2010 की धारा 28 के अनुसार, विश्वविद्यालय की संचालन-परिषद् ने नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियमवली, 2012 का निर्माण किया, जिसे बाद में नालंदा (संशोधन) अधिनियमवली, 2021 द्वारा संशोधित किया गया। इन अधिनियमवलियों में विश्वविद्यालय के विभिन्न पदाधिकारियों, शिक्षकों तथा अन्य कर्मचारियों की नियुक्ति की विधि, उनके वेतन-भत्तों तथा सेवा की अन्य शर्तों का प्रावधान किया गया है।

5. दिनांक 31.03.2020 को जारी एक विज्ञापन के माध्यम से विश्वविद्यालय ने संकाय पदों हेतु 'रोलिंग विज्ञापन' प्रकाशित किया, जिसमें योग्य एवं मेधावी अभ्यर्थियों से प्राध्यापक/सहायक प्राध्यापक के पदों पर विभिन्न संकायों, जिनमें बौद्ध अध्ययन, दर्शनशास्त्र एवं तुलनात्मक धर्म संकाय भी सम्मिलित है, में नियुक्ति के लिए सीवी / अभिरुचि-पत्र आमंत्रित किए गए।

6. याचिकाकर्ता, जिनके पास बुनियादी विज्ञान, योग दर्शन तथा योग चिकित्सा में एम.एससी. की योग्यता है, साथ ही योग चिकित्सा एवं मनोरोग विज्ञान में पीएच.डी. तथा योग विषय में एन.ई.टी. की योग्यता भी है, ने दिनांक 26.03.2021 को ई-मेल के माध्यम से आवश्यक विवरण सहित अपना सीवी प्रस्तुत किया और तदनुसार, उन्हें सूचित किया गया कि उनका आवेदन चयन सूची में आ गया है तथा उन्हें साक्षात्कार हेतु बुलाया गया, जो दिनांक 30.06.2021 को विश्वविद्यालय के दिल्ली कार्यालय में आयोजित किया जाना था। याचिकाकर्ता ने विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित उक्त साक्षात्कार में भाग लिया और दिनांक 12.07.2021 (परिशिष्ट-3) के पत्र द्वारा, जो विश्वविद्यालय के कुलसचिव द्वारा निर्गत किया गया था, याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि उन्हें वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक के पद पर तीन वर्षों की कार्यकाल ट्रेक पर नियुक्त किया गया है, जिसका वेतनमान अमेरिकी

डॉलर \$15,000–25,000 प्रति वर्ष है, अन्य स्वीकृत भत्तों सहित, जो दिनांक 12.07.2021 के उक्त पत्र में उल्लिखित नियम एवं शर्तों के अधीन है।

7. नियुक्ति पत्र, दिनांक 12.07.2021 की धारा 3 (iii) में यह प्रावधान है कि याचिकाकर्ता की नियुक्ति विश्वविद्यालय में पदभार ग्रहण करने की तिथि से परीक्षा अवधि पर होगी, जिसे नियुक्ति प्राधिकारी के विवेकानुसार बढ़ाया जा सकता है।

8. उपर्युक्त नियुक्ति पत्र के अनुपालन में, याचिकाकर्ता ने विश्वविद्यालय में वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक के रूप में कार्यभार ग्रहण किया और तदनुसार, दिनांक 10.08.2021 (परिशिष्ट-4) को याचिकाकर्ता और विश्वविद्यालय के कुलसचिव के मध्य सेवा अनुबंध निष्पादित किया गया। याचिकाकर्ता की नियुक्ति अनुबंध आधार पर तीन वर्षों की अवधि के लिए की गई थी, जिसे संतोषजनक प्रदर्शन के अधीन बढ़ाया जा सकता था।

9. अनुबंध की धारा 1.3 में कहा गया है कि संपूर्ण अनुबंध अवधि परीक्षा पर होगी और समीक्षा प्रतिवेदन के आधार पर कार्यकाल ट्रेक को स्थायी पद हेतु विचार किया जा सकता है अथवा परीक्षा की अवधि और बढ़ाई जा सकती है अथवा सेवा समाप्त की जा सकती है।

10. अनुबंध की धारा 4 में कर्मचारी की सेवा समाप्ति का उल्लेख है और यह कहा गया है कि इस अनुबंध के अंतर्गत यदि किसी भी शर्त का उल्लंघन किया जाता है या कदाचार का आरोप लगता है या विश्वविद्यालय के हितों के प्रतिकूल गतिविधियों में संलिप्तता पाई जाती है, तो कर्मचारी की सेवाएँ समाप्त की जा सकती हैं।

11. याचिकाकर्ता के अनुसार, वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक के पद पर कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् उन्होंने अपनी सेवाएँ अत्यंत निष्ठा एवं ईमानदारी के साथ देना प्रारंभ किया और याचिकाकर्ता ने अपनी योग्यता के अनुसार यथासंभव कार्य किया तथा

विश्वविद्यालय में संकाय के रूप में उनके प्रदर्शन के संबंध में उनके विरुद्ध कोई शिकायत नहीं रही।

12. उत्तरदाता- विश्वविद्यालय ने प्रतिउत्तर शपथ पत्र दाखिल किया, जिसमें यह कहा गया कि रिट याचिका ग्राह्य नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता परीवीक्षा पर संकाय सदस्य थे और अनुबंध की शर्तों के अनुसार संपूर्ण अनुबंध अवधि परीवीक्षा पर थी। अनुबंध के प्रथम वर्ष में उनके प्रदर्शन की समीक्षा की गई और उनकी परीवीक्षा अनुबंध अवधि का विस्तार नहीं किया गया। याचिकाकर्ता को कभी पदच्युत नहीं किया गया। याचिकाकर्ता भलीभाँति जानते थे कि आगे का विस्तार और/या परीवीक्षा पर निरंतरता संतोषजनक प्रदर्शन, विद्वत्ता, आचरण एवं सत्यनिष्ठा के अधीन है, जिसका पालन याचिकाकर्ता द्वारा नहीं किया गया, यद्यपि उन्हें डीन और सक्षम प्राधिकारी द्वारा कई अवसरों पर नासर्गिक न्याय के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए परामर्श दिया गया।

13. याचिकाकर्ता की अनुबंधीय अवधि की परीवीक्षा के दौरान, उन्हें अपने आचरण को सुधारने, कार्य नैतिकता अपनाने तथा अपनी विद्वत्ता एवं प्रदर्शन को विश्वविद्यालय की अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा एवं छवि के अनुरूप सुधारने के कई अवसर दिए गए। उन्हें न केवल संकाय के डीन, बल्कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा भी एक-दो बैठकों में कई बार परामर्श, सलाह एवं चेतावनी दी गई।

14. अनुबंध की धाराएँ 1, 1.1 एवं 1.3 में वर्णित प्रावधानों के आलोक में, संबंधित संकाय/डीन से प्रदर्शन प्रतिवेदन प्राप्त किया गया और उनके प्रदर्शन एवं आचरण की विधिवत समीक्षा की गई, जिसके उपरान्त अनुबंध अवधि को परीवीक्षा के अंतर्गत आगे नहीं बढ़ाने का निर्णय लिया गया। याचिकाकर्ता को अग्रिम रूप से एक माह का नोटिस भी दिया गया ताकि वे अपने समस्त बकाया का निपटारा कर सकें और 'अदेय प्रमाण पत्र' प्रस्तुत कर

सकें। समीक्षा प्रतिवेदन एवं कुलपति सचिवालय द्वारा प्रदत्त प्रमाणपत्र प्रतिउत्तर हलफनामे में परिशिष्ट आर 2/2 एवं आर 2/2 ए के रूप में संलग्न किए गए हैं।

15. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश को चुनौती देते हुए प्रस्तुत किया कि आक्षेपित आदेश में ऐसा कोई प्रतिवेदन अंकित नहीं है, जिसमें याचिकाकर्ता के आचरण को असंतोषजनक बताया गया हो, जिसके आधार पर उनकी परिवीक्षा अवधि का विस्तार नहीं किया गया। याचिकाकर्ता को कभी यह सूचित नहीं किया गया कि उनका प्रदर्शन न्यून स्तर का पाया गया है और उन्हें न तो अपने प्रदर्शन को सुधारने का अवसर दिया गया और न ही प्राधिकारी के समक्ष अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने का। अतः आक्षेपित आदेश पूर्णतः नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन है। याचिकाकर्ता को कभी यह सूचित/संप्रेषित नहीं किया गया कि किसी जांच के उपरांत उनकी परिवीक्षा अवधि को आगे नहीं बढ़ाया गया और आक्षेपित आदेश पारित करने से पूर्व याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर भी नहीं दिया गया।

16. अपने तर्क के समर्थन में, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने उच्चतम न्यायालय के निर्णय **सुमति पी. शेर बनाम भारत संघ एवं अन्य, (1989) 3 एससीसी 311** पर भरोसा किया।

17. दूसरी ओर, उत्तदाता विश्वविद्यालय की ओर से प्रस्तुत वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क किया कि विश्वविद्यालय नालंदा विश्वविद्यालय अधिनियम, 2010 की धारा 9 (2) के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्था है और संचालन-परिषद के प्रति उत्तरदायी है। भारत संघ, उत्तदाता संख्या 1 के रूप में, विदेश मंत्रालय, नई दिल्ली के सचिव के माध्यम से उत्तदाता बनाया गया है, परंतु वह विश्वविद्यालय का प्रबंधन/शासन नहीं करता। याचिकाकर्ता परिवीक्षा पर थे और उनकी परिवीक्षा अनुबंधीय अवधि के प्रथम वर्ष में, उनके प्रदर्शन की समीक्षा एवं विश्वविद्यालय के विवेक के आधार पर उनकी परिवीक्षा अवधि का विस्तार नहीं करने का

निर्णय लिया गया, आक्षेपित आदेश न तो पदच्युत करने का आदेश है और न ही बर्खास्तगी का, बल्कि यह केवल एक माह पूर्व की अग्रिम सूचना है कि उनकी अनुबंधीय एवं परिवीक्षा अवधि का विस्तार नहीं किया जा रहा है, जबकि याचिकाकर्ता द्वारा हस्ताक्षरित संपूर्ण अनुबंध अवधि ही परिवीक्षा अवधि थी। उन्होंने आगे तर्क किया कि याचिकाकर्ता को कई अवसरों पर डीन एवं सक्षम प्राधिकारी द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए परामर्श एवं सलाह दी गई, किंतु याचिकाकर्ता अपने प्रदर्शन में सुधार नहीं कर पाए। अपने तर्क के समर्थन में वरिष्ठ अधिवक्ता ने समीक्षा प्रतिवेदन एवं याचिकाकर्ता को परामर्श देने हेतु आयोजित बैठकों की तिथियों (परिशिष्ट आर 2/2 एवं आर 2/2 ए, प्रतिउत्तर हलफनामे में संलग्न) पर भरोसा किया।

18. वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि आक्षेपित आदेश कलंकित प्रकृति का नहीं है। उन्होंने आगे यह तर्क भी दिया कि याचिकाकर्ता अनुबंध के हस्ताक्षरकर्ता हैं, इसलिए वे अपने आचरण एवं प्रदर्शन समीक्षा के संबंध में अनभिज्ञता का दावा नहीं कर सकते। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि याचिकाकर्ता ने स्वयं अनुबंध की शर्तों को स्वीकार किया है, जिससे उनके द्वारा दिए गए नियमों एवं शर्तों पर सहमति का संकेत मिलता है।

19. अपने तर्क के समर्थन में, वरिष्ठ अधिवक्ता ने उच्चतम न्यायालय के निर्णयों, ओमप्रकाश मान बनाम शिक्षा निदेशक (प्राथमिक) एवं अन्य, (2006) 7 एससीसी 558, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम पलक मोदी एवं अन्य, (2013) 3 एससीसी 607, और शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य, (1974) 2 एससीसी 831 पर भरोसा किया।

20. मैंने संबंधित पक्षकारों के अधिवक्ताओं की दलीलें सुनीं और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों, जिनमें उनके द्वारा उद्धृत न्यायिक निर्णय भी सम्मिलित हैं, का अवलोकन किया।

21. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा भरोसा किया गया, **सुमति पी. शेर** (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 7 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"7. इस प्रस्ताव पर कोई विवाद नहीं हो सकता है। हम यह नियम नहीं बना रहे हैं कि इस मामले में नियमित जांच होनी चाहिए। हम बस इतना कहना चाहते हैं कि यदि उसकी सेवा को निरंतर न रखने का निर्णय लिया जाता है, तो यह उचित एवं आवश्यक है कि उसे पूर्व में यह बता दिया जाए कि उसका कार्य तथा प्रदर्शन अपेक्षित स्तर का नहीं है।

22. उच्चतम न्यायालय ने तथ्यों और निर्णय की पृष्ठभूमि में (i) **चंपकलाल चिमनलाल शाह बनाम भारत संघ [ए.आई.आर. 1964 एससी 1854: (1964) 5 एससीआर 190: (1964) 1 एलएलजे 752]** के मामलों में भरोसा किया और (ii) **तेल और नैसर्गिक गैस आयोग बनाम डॉ. एम. डी. एस. इस्कंदर अली [(1980) 3 एससीसी 428:1980 एससीसी (एल. एंड एस.) 446]** ने कहा कि इस प्रस्ताव के बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता है कि परिवीक्षाधीन के मामले में, पद के लिए अनुपयुक्तता के आधार पर सेवा की समाप्ति भारत के संविधान के कंडिका 311 (2) को आकर्षित नहीं करती है। उच्चतम न्यायालय ने आगे कहा है कि हम यह नियम नहीं बना रहे हैं कि इस मामले में नियमित जांच होनी चाहिए और हम केवल इतना कहना चाहते हैं कि यदि उसकी सेवा को समाप्त किया जाना है, तो यह उचित और आवश्यक है कि उसे पहले से बताया जाए कि उसका कार्य और प्रदर्शन सही नहीं है।

23. **पलक मोदी** (उपरोक्त) के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 25 में निम्नलिखित निर्णय दिया है:-

"25. निरस्त निर्णयों का अनुपात यह है कि एक परिवीक्षाधीन को पद धारण करने का कोई अधिकार नहीं है और उसके द्वारा धारण किए गए पद के लिए सामान्य रूप से अनुपयुक्त होने के कारण परिवीक्षा अवधि के दौरान या उसके अंत में उसकी सेवा को किसी भी समय समाप्त किया जा सकता है। यदि सक्षम प्राधिकारी परिवीक्षाधीन की उपयुक्तता का निर्णय करने या सेवा में उसके आगे बने रहने या पुष्टि के लिए जांच करता है और ऐसी जांच उसकी सेवा को समाप्त करने का निर्णय लेने का आधार है, तो सक्षम प्राधिकारी की कार्रवाई को दंडात्मक नहीं माना जा सकता है। हालाँकि, यदि कदाचार का उपरोक्त आरोप की गई कार्रवाई की नींव है, तो सक्षम प्राधिकारी द्वारा लिए गए अंतिम निर्णय को नैसर्गिक न्याय के नियमों के उल्लंघन के आधार पर रद्द किया जा सकता है।

24. समशेर सिंह (उपरोक्त) के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 62 में निम्नलिखित निर्णय दिया है:-

"62. इस न्यायालय द्वारा *पुरुषोत्तम लाल ढींगरा बनाम भारत संघ* [ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 36:1958 एससीआर 828:1958 एससीजे 217]। दास, सी. जे. ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए कहा कि जहां किसी व्यक्ति को परिवीक्षा पर सरकारी सेवा में स्थायी पद पर नियुक्त किया जाता है, तो परिवीक्षा की अवधि के दौरान या उसके अंत में उसकी सेवा की समाप्ति सामान्य रूप से और अपने आप में एक सजा नहीं होगी क्योंकि इस प्रकार नियुक्त सरकारी सेवक को उक्त पद पर बने रहने का अधिकार किसी निजी नियोक्ता द्वारा परिवीक्षा पर नियुक्त सेवक को प्राप्त अधिकार से ज्यादा नहीं होता

है। इस तरह की समाप्ति किसी कर्मचारी के पद पर बने रहने के किसी भी अधिकार को जब्त करने के रूप में कार्य नहीं करती है, क्योंकि उसे ऐसा कोई अधिकार नहीं है। जाहिर है कि इस तरह की समाप्ति सजा के रूप में बर्खास्तगी, निष्कासन या रैंक में कमी नहीं हो सकती है। हालाँकि, *ढींगरा मामले* में श्री दास, मुख्य न्यायमूर्ति की दो महत्वपूर्ण टिप्पणियां हैं। एक यह है कि यदि किसी अनुबंध या सेवा नियमों के तहत सेवा को समाप्त करने का अधिकार मौजूद है तो सरकार के मन में कार्यरत प्रेरणा पूरी तरह से अप्रासंगिक है। दूसरा यह है कि यदि सेवा की समाप्ति को दुराचार, लापरवाही, अक्षमता या अन्य अयोग्यता पर आधारित करने की मांग की जाती है, तो यह एक सजा है और संविधान के कंडिका 311 का उल्लंघन करती है। उद्देश्य को अप्रासंगिक क्यों कहा जाता है, इसका कारण यह है कि यह मन की स्थिति में निहित है जो स्पष्ट नहीं है। दूसरी ओर, यदि समाप्ति दुराचार पर आधारित है तो यह वस्तुनिष्ठ है और प्रकट है।

25. अनुबंध की शर्तों की सावधानीपूर्वक जांच करने पर, मैं पाता हूँ कि अनुबंध का खंड 1.1 सेवा की शर्त से संबंधित है और यह निर्धारित करता है कि कर्मचारी की सेवाओं को कार्यकाल पूरा होने पर या उससे पहले कोई कारण बताए बिना बंद/बंद किया जा सकता है। यदि कर्मचारी सेवा अवधि के दौरान अपनी नियुक्ति से इस्तीफा देने का निर्णय लेता है, तो वह परीक्षा अवधि के दौरान एक महीने का नोटिस या उसके बदले में एक महीने का वेतन देगा। परीक्षा अवधि पूरी होने के बाद, संबंधित कर्मचारी को उसके बदले में तीन महीने या तीन महीने के वेतन की अवधि के लिए नोटिस देना होगा।

26. अनुबंध का खंड 1.3 परीक्षा से संबंधित है और कहता है कि अनुबंध की पूरी अवधि परीक्षा पर होगी और कार्य निष्पादन की प्रभावशीलता, जवाबदेही, आचरण

और व्यवहार, विद्वता और सत्यनिष्ठा के आधार पर, उसकी परीक्षा अवधि को और बढ़ाया जा सकता है। विश्वविद्यालय के निर्णय के अनुसार निष्पादन और आचरण की समीक्षा की जाएगी। समीक्षा रिपोर्ट के आधार पर, कार्यकाल ट्रेक पर कार्यकाल की स्थिति या परीक्षा या सेवा समाप्ति के आगे के विस्तार के लिए विचार किया जा सकता है।

27. अनुबंध का खंड 1.4 वेतन से संबंधित है, जिसमें कहा गया है कि कर्मचारी को विश्वविद्यालय के नियमों/अनुदेशों के अनुसार ऐसा वेतन/परिलब्धि प्राप्त होगी, जो नोडल मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा किसी भी संशोधन के अधीन होगी, बशर्ते कि जब भी नियुक्ति या परिलब्धि की प्रकृति में कोई परिवर्तन होता है, तो परिवर्तन दर्ज किया जाएगा।

28. अनुबंध की शर्तों का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट है कि परीक्षा की अवधि का विस्तार अथवा निष्कासन, कर्मचारी के कार्य-प्रदर्शन की समीक्षा पर निर्भर करता है तथा अनुबंध की समाप्ति, कर्मचारी द्वारा अनुबंध की शर्तों के उल्लंघन अथवा कदाचार के आरोप या विश्वविद्यालय के हितों के प्रतिकूल गतिविधियों में संलिप्त होने की दशा में निर्भर करती है।

29. दिनांक 06.12.2022 के आक्षेपित आदेश के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि यह सेवा-समाप्ति का आदेश नहीं है, बल्कि विश्वविद्यालय ने यह निर्णय लिया है कि परीक्षा पर कार्यरत याचिकाकर्ता की अनुबंध अवधि को आगे नहीं बढ़ाया जाएगा। तदनुसार, आक्षेपित आदेश कलंकित नहीं है, अपितु यह मात्र एक आदेश है, जिसमें याचिकाकर्ता के कार्य-प्रदर्शन की समीक्षा के उपरान्त परीक्षा अवधि को आगे न बढ़ाने का निर्णय लिया गया है।

30. उत्तरदाता- विश्वविद्यालय ने अपने प्रति-शपथ पत्र के कंडिका 20 और 23 में विशेष रूप से कहा है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्ता को कई बार परामर्श दिया गया, जिससे वह अपने आचरण, कार्य-प्रदर्शन और उत्तरदायित्व में सुधार करे। अनेक परामर्श सत्रों तथा पर्याप्त अवसर दिए जाने के बावजूद और डीन द्वारा

प्रस्तुत शैक्षणिक कार्यक्रम की कार्य-प्रदर्शन संबंधी समीक्षा प्रतिवेदन पर विचार करने के उपरान्त भी, याचिकाकर्ता ने अपने कार्य-प्रदर्शन, विद्वता, प्रस्तुतीकरण की प्रभावशीलता, आचरण और उत्तरदायित्व में सुधार नहीं किया।

31. इस प्रस्तुति के समर्थन में विश्वविद्यालय ने, डीन द्वारा प्रस्तुत समीक्षा प्रतिवेदन तथा दस्तावेज़, जिनमें याचिकाकर्ता और विश्वविद्यालय प्राधिकारियों के मध्य विभिन्न तिथियों को परामर्श हेतु हुई बैठकों का विवरण है, अभिलेख पर संलग्न किया है। याचिकाकर्ता ने उपर्युक्त अनुच्छेदों में किए गए कथनों तथा परिशिष्ट आर 2/2 में संलग्न दस्तावेज़ों का खंडन नहीं किया है।

32. समीक्षा प्रतिवेदन (परिशिष्ट आर 2/2) का अवलोकन करने पर यह प्रत्यक्ष होता है कि डीन तथा छात्रवृत्ति समिति के अध्यक्ष ने याचिकाकर्ता के कार्य-प्रदर्शन पर अपनी रिपोर्ट में कहा है कि डीन के रूप में मेरे अधीन दो परास्नातक कार्यक्रमों में अनेक अध्यापक पढ़ाते हैं और मैं छात्रों से नियमित रूप से संवाद करता हूँ, तथा जब वे कोई समस्या रखते हैं तो मैं विश्वविद्यालय की दृष्टि और छवि के अनुरूप तत्काल उसका समाधान करता हूँ। प्रतिवेदन में आगे कहा गया है कि डॉ. हलप्पा (याचिकाकर्ता), जिन्होंने स्वयं को योग के विशेषज्ञ बताया, को द्वितीय सत्र के एम.ए. हिन्दू अध्ययन के छात्रों को "पतंजलि योगसूत्र – सिद्धांत और व्यवहार" विषय पढ़ाने का कार्य सौंपा गया। छात्रों ने अनेक बार मौखिक शिकायत की कि वे पाठ्यक्रम को ठीक से पढ़ाने में सक्षम नहीं हैं और उनकी योग अथवा योग दर्शन पर विद्वता की कमी की भी शिकायतें प्राप्त हुईं। संक्षेप में, न केवल योगसूत्र बल्कि विद्यालय के किसी भी पाठ्यक्रम को पढ़ाने में उन्हें कोई प्रवीणता नहीं थी। विद्वता, प्रस्तुतीकरण की प्रभावशीलता, शिक्षण उत्तरदायित्व और आचरण सुधारने की सलाह देने के बावजूद, वे बहस करते रहे और असत्य कथन द्वारा गुमराह करते रहे। डीन ने आगे कहा कि उन्हें विद्यालय से संबंधित किसी भी कार्य को सौंपने में संकोच होता था।

33. डीन-प्रभारी श्री अभय कुमार सिंह की एक अन्य प्रतिवेदन भी अभिलेख पर है, जिसमें संकाय सदस्यों/छात्रों/कर्मचारियों से प्राप्त प्रतिक्रिया के आधार पर याचिकाकर्ता के कार्य का उल्लेख किया गया है। उसमें कहा गया है कि डॉ. नवीन जी. हलप्पा के शिक्षण कार्य में विषय का ज्ञानाभाव स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। उन्हें विद्यालय के शिक्षण पाठ्यक्रम सौंपे गए थे, किंतु उन्होंने अपने ज्ञान की मौलिक और सैद्धांतिक कमी के कारण शिक्षण दायित्वों का निर्वहन नहीं किया, जिससे विद्यालय में अध्ययनरत भारतीय और अंतरराष्ट्रीय छात्रों के अध्ययन स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इस विषय पर छात्रों की बार-बार शिकायतें आईं। "भारत की आरोग्य एवं उपचार परम्पराएँ" पाठ्यक्रम भी उनकी अक्षमता के कारण प्रभावित हुआ और छात्रों ने इसे नहीं चुना। प्रतिवेदन में आगे यह भी उल्लिखित है कि अनेक बैठकों में, जिनमें डीन भी उपस्थित थे, माननीय कुलपति द्वारा परामर्श प्रदान किया गया और याचिकाकर्ता को अपने कार्य में सुधार एवं निर्वहन हेतु पर्याप्त अवसर एवं मार्गदर्शन प्रदान किया गया, तथापि उसने स्वयं के प्रति किसी प्रकार की उत्तरदायित्व स्वीकार नहीं किया तथा अपने आचरण एवं अध्यापन में भी सुधार करने में असफल रहे।

34. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का मुख्य तर्क यह है कि याचिकाकर्ता को अपने कार्य-प्रदर्शन में सुधार का अवसर नहीं दिया गया तथा उन्हें अग्रिम रूप से यह नहीं बताया गया कि उनका कार्य और प्रदर्शन अपेक्षित स्तर का नहीं है।

35. उपर्युक्त तथ्यात्मक स्थिति और विश्वविद्यालय द्वारा प्रति-शपथ पत्र में उल्लिखित अप्रतिवादित तथ्यों के आधार पर, जिनकी सत्यता पर इस न्यायालय द्वारा संदेह नहीं किया जा सकता, मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि याचिकाकर्ता द्वारा संदर्भित निर्णय वर्तमान मामले की परिस्थितियों में लागू नहीं होता, क्योंकि यहाँ स्पष्ट कथन और दस्तावेज़ उपलब्ध हैं कि याचिकाकर्ता के कार्य-प्रदर्शन की समीक्षा के उपरान्त उन्हें शैक्षणिक प्रदर्शन सुधारने का अवसर दिया गया था, परंतु उन्होंने विषय के मौलिक एवं सैद्धांतिक ज्ञानाभाव के

कारण शिक्षण दायित्वों का निर्वहन नहीं किया। विश्वविद्यालय ने अनुबंध की शर्तों के अनुरूप यह निर्णय लिया कि याचिकाकर्ता की परिवीक्षा अवधि आगे नहीं बढ़ाई जाएगी। मैं इस निष्कर्ष पर भी पहुँचता हूँ कि विश्वविद्यालय ने विभिन्न अवसरों पर परामर्श सत्रों के माध्यम से याचिकाकर्ता को अपने प्रदर्शन और क्षमता सुधारने का अवसर दिया था। तदनुसार, विश्वविद्यालय ने समीक्षा प्रतिवेदनों के आधार पर और अनुबंध की धारा 1.3, जो परिवीक्षा से संबंधित है, के अनुसार याचिकाकर्ता की परिवीक्षा अवधि आगे न बढ़ाने का उचित निर्णय लिया।

36. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **ओम प्रकाश मन्न** (उपरोक्त) प्रकरण में यह प्रतिपादित किया है कि अब यह विधि का सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत संहिताबद्ध नियम नहीं हैं और उन्हें किसी कठोर ढाँचे में लागू नहीं किया जा सकता। यह भी सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि यदि परिवीक्षाधीन कर्मचारी को परिवीक्षा अवधि में ही पद से बर्खास्त/समाप्त कर दिया जाए, तो किसी अवसर की आवश्यकता नहीं होती, और इसलिए नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन का प्रश्न ही नहीं उठता।

37. **पलक मोदी** (उपरोक्त) मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने प्रतिपादित किया है कि परिवीक्षाधीन कर्मचारी को पद धारण करने का कोई अधिकार नहीं होता और उसकी सेवा, सामान्य अनुपयुक्तता के आधार पर, परिवीक्षा अवधि के दौरान अथवा उसके अंत में, कभी भी समाप्त की जा सकती है। यदि सक्षम प्राधिकारी परिवीक्षाधीन कर्मचारी की उपयुक्तता या उसकी सेवा में आगे निरंतरता अथवा पुष्टिकरण का निर्णय लेने हेतु कोई जाँच करता है और ऐसी जाँच ही सेवा समाप्ति के निर्णय का आधार बनती है, तो ऐसी कार्रवाई को दंडात्मक नहीं कहा जा सकता।

38. जैसा कि मैंने पहले ही यह निष्कर्ष निकाला है कि आक्षेपित आदेश कलंकित अथवा दंडात्मक नहीं है, अतः इस मामले के तथ्यों में नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत कठोर अर्थों में (स्ट्रिक्टो सेन्सो) यहाँ लागू नहीं होता। तथापि, अभिलेख पर उपलब्ध

दस्तावेजों से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को डीन द्वारा विभिन्न अवसरों पर तथा कुलपति एवं अन्य विश्वविद्यालय प्राधिकारियों द्वारा कई बैठकों में परामर्श देकर अपने कार्य-प्रदर्शन में सुधार करने का पर्याप्त अवसर दिया गया।

39. माननीय उच्चतम न्यायालय ने शमशेर सिंह (उपरोक्त) मामले में, **पुरुषोत्तम लाल धिंगरा बनाम भारत संघ** [एआईआर 1958 एससी 36 : 1958 एससीआर 828 : 1958 एससी 217] मामले में दिए गए निर्णय पर विचार करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि न्यायमूर्ति दास, मुख्य न्यायाधीश की धिंगरा मामले में दो महत्वपूर्ण टिप्पणियाँ हैं। पहली यह कि यदि अनुबंध अथवा सेवा नियमों के अंतर्गत सेवा समाप्त करने का अधिकार निहित है, तो सरकार के मन में कार्यरत उद्देश्य पूर्णतः अप्रासंगिक है। दूसरी यह कि यदि सेवा-समाप्ति, कदाचार, लापरवाही, अयोग्यता अथवा अन्य अर्हताभाव पर आधारित है, तो यह दंड है और संविधान के कंडिका 311 का उल्लंघन करती है। उद्देश्य को अप्रासंगिक कहने का कारण यह है कि यह मानसिक स्थिति में निहित होता है, जो प्रकट नहीं होती। दूसरी ओर, यदि सेवा-समाप्ति कदाचार पर आधारित हो, तो वह वस्तुनिष्ठ और प्रत्यक्ष होती है।

40. वर्तमान मामले में, प्रतिवादी-विश्वविद्यालय ने अनुबंध की शर्तों के अंतर्गत अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए, याचिकाकर्ता के कार्य-प्रदर्शन की समीक्षा प्रतिवेदन पर आधारित एक निर्दोष आदेश पारित किया है कि उनकी परिवीक्षा अवधि को आगे नहीं बढ़ाया जाएगा। आक्षेपित आदेश कदाचार के आरोप पर आधारित नहीं है और न ही यह दंडात्मक है।

41. उपर्युक्त तथ्यात्मक और विधिक विवेचन के आधार पर, मेरे विचार में आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय द्वारा किसी प्रकार का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है।

42. परिणामतः, वर्तमान रिट याचिका निरस्त की जाती है।

43. लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

(अनिल कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति)

प्रभाकर आनंद/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।